Research Paper E-ISSN NO : 2455-295X | VOLUME : 10 | ISSUE : 6 | JUNE 2024

भारतीय सिनेमा में नारी चित्रण

धर्मदास जैसवार [1]

[1] **सहायक आचार्य, समाजशास्त्र (अतिथि VSY), सेठ फूलचन्द छीतरमल महाविद्यालय, पीसांगन (अजमेर).**

ABSTRACT:

सिनेमा मनोरंजन का एक प्रभावी साधन होने के साथ मानवी प्रवृत्तियों को भी प्रभावित करने की ताकत रखता है। समाज में मानवीय भावनाओं का जो महत्व है वही सिनेमा की असल बुनियाद है। इसी समाज का अभिन्न अंग नारी है और इसी कारण भारतीय नारी का प्रतिनिधित्व सिनेमा के नारी पात्र करते रहे है। सिनेमा ने पुरुष प्रधान कहानी के अलावा नारी समय विषयों की भी केन्द्र में रख कर नारी प्रधान फिल्मों का निर्माण कर नारी जीवन के अनछुए पहलुओ को उजागर किया है।

KEYWORDS:

नारी का शोषण, विद्रोह तथा नारी का हक एवं अधिकार।

PAPER ACCEPTED DATE:	PAPER PUBLISHED DATE:
28th June 2024	30th June 2024

विषय प्रवेश:-

भारतीय सिनेमा अपनी कारगर भूमिका के कारण ही मानव जीवन में विकासात्मक बदलाव लाने में सफल हुआ है। जीवनदायी प्रेरणा और सकारात्मक दृष्टिकोण यह भारतीय सिनेमा की महत्वपूर्ण उपलब्धि है, रही है। भारतीय समाज का अभिन्न अंग नारी है, इसी कारण नारी से जुड़े कई प्रश्नों पर सिनेमा के माध्यम से प्रकाश डाला गया है। 3 मई 1931 में मुंबई के कोरोनेशन सिनेमा में 'राजा हरिशचन्द्र 'नामसे प्रथम फिल्म प्रदर्शित हुई और उसके बाद लगभग अठारह साल बाद आर्देशिर ईरानी द्वारा निर्देशित "आलम आरा " के नाम से 1931 'में बोलती फिल्म (सिनेमा) प्रदर्शित हुई। इसके बाद भारतीय सिनेमा के निर्देशक फांज ऑस्टेन द्वारा निर्देशित 'अछूत कन्या' 1936 में प्रदर्शित हुई।' अछूत कन्या' सिनेमा में दलित नारी की दयनीयता को प्रस्तुत किया। प्रस्तुत सिनेमा में पहली बार दलित नारी और ब्राहमण युवक की अन्तरजातिय प्रेम संबंधों को उठाया गया था। इसके साथ ही शांताराम ने एन. एच. आपटे के उपन्यास पर मराठी में 'कुंकू ' और ' हिंदी ' में ' दुनिया न माने ' नामक फिल्मे बनाई। इन सिनेमाओं में बेमेल विवाह तथा स्त्री की दृढ इच्छाशक्ति का चित्रण किया। नारी चेतना का प्रतीक बनते नारी अस्मिता के लिए आवाज उठाती, अत्याचार को निपटाने की एक नई परंपरा की नींव डालती 1935 में प्रकाशित फिल्म ' हंटरवाली' इसकी बुनियाद रही है। मेहबूब खान निर्देशित ' औरत ' 1940 में प्रकाशित सिनेमा जो बाद मे 1957 में 'मदर इंडिया ' नाम से फिर से बना। यह सिनेमा नारी विषयम भावनाओं को भेद देने वाला है। सिनेमा की नायिका पति के पश्चात बच्चों का पालन पोषण करते हुऐ अपना भाग्य खुद बनाती है। अन्याय के खिलाफ आवाज उठाते हुए अत्याचार करने वाले अपने बेटे को खुद ही मार डालती है। इसमें नारी चरित्र में नारीवादी चमक और आक्रमकता दिखाई गयी है। भारतीय अभिजात्य वर्ग के हाथों उत्पीड़ित नारी की कहानी पस्तुत करती 'साहब बीबी और गुलाम' 'उमराव जान' ' पारिजा' आदि सिनेमा नारीवादी चमक और आक्रात्मकता को प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत फिल्मों में नारी की सामाजिक हैसियत को सामने रखकर सवाल उठाया गया है कि आज औरत समाज में प्रकारांतर से उन्ही सामन्ती मूल्यों का जुआ अपने कंधो पर नहीं ढो रही है।

1963 में बनी विमल रॉय निर्देशित फिल्म ' बन्दिनी ' और 1965 में बनी फिल्म 'गाईड' जिसके निर्देशक विजय आनंद है। इनमे नारी जीवन के विदूप सत्य की सामने लाकर रखा। प्रस्तुत फिल्मो में नारी की अतृप्त इच्छाएँ, उनके सपने, उनके सुख को दुखों में तब्दील करते है इसका वास्तविक चित्रण किया गया है। इस लिहाज से देखे तो इन फिल्मो में नारी के त्याग और बलिदान, आर्दशता, सचरित्रता आदि रुपों को सराहा गया है और साथ ही उसकी आतंरिक शक्ति, चेतना, साहस को भी आक्रोश और विद्रोह के रूप भी दिखाया गया है।

1980 के पूर्व में जिस हिंदी सिनेमा ने नारी के प्रेम, त्याग, बलिदान, ममता, करुणा आदि का चित्रण किया नारी के अस्तित्व उसका आक्रोश और नारी शक्ति को प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया वही 1980 के बाद के फिल्मों ने नारी के एक अलग रूप को उसके अलग अंदाज को दर्शकों के सामने प्रस्तुत किया। इन फिल्मों में बलिदान, मिर्च मसाला फिल्मों को लिया जा सकता है 'मिर्च मसाला' फिल्म में पुरुष प्रधान संस्कृति में महिलाओं का घर से बाहर निकलकर पुरुषो के बराबर काम करना और कार्यालय में जहां वह काम करती है वहां सुरक्षित है, इस मुदडे की बड़ी ही खुबसूरती में पेश किया गया है। इसमें नायिका स्मिता पाटिल मालिकशाही के खिलाफ नौकरशाही की आवाज को बुलंद करती है।

फिल्म बाजार (1982) की स्मिता पाटिल, बलिदान (1985) की श्रीदेवी, खुन भरी मांग (1988) की रेखा, 1994 की बेडींट क्वीन की सीमा बिस्वास, जैसी फिल्मो में चित्रित नारी पात्र नारी चेतना का आगाज करती है। इस प्रकार की फिल्मों में नारी अनचाहे पुरुष का प्रतिरोध करने लगती है, साथ ही अनैतिकता लज्जा, मर्यादा की तमाम सीढ़ियों को तोड़ती नारी एक नई यथार्थवादी धरातल पर खड़ी होती दिखाई देती है। 1993 में प्रदर्शित फिल्म दामिनी की नायिका मिनाक्षी शेषाद्रि एक ऐसी नारी है जो नारी होने पर गर्व तो महसूस करती है परंतु नारी सम्मान हेतु जागरुक भी है। आत्मसम्मान और न्याय के खातिर घर की चौखट को लांघकर अपने ही घरवालों के खिलाफ आवाज उठाने वाली नायिका है "दामिनी"। यह फिल्म नारी के बुद्धि सौंदर्य, उसकी आंतरिक शक्ति एवं नारी चेतना को बड़ी ही खुबसूरती से प्रस्तुत करती है। 1933 में ही राज कुमारी संतोषी ने अस्तित्व में नारी का रुप प्रदर्शित किया है। मध्यमवर्गीय दामपत्य जीवन पर प्रकाश डालती फिल्म, पत्नी की भावनाओं को बेदावल करता पति और पति के प्रेम के लिऐ उसके प्रेम भरे शब्दों को उसके सानिध्य को तरसने वाली पत्नी जो बाद में अपने अस्तित्व को खोजती है और उसी अस्तित्व के साथ अपनी नई जिंदगी जीती है। प्रस्तुत फिल्म की नायिका तब्बू नारी संवेदना और भावनाओं को जागृत करती है जो इस फिल्म के गीत से महसूस होता है " ना कटेगी, ना जलेगी, ना मारूंगी, मैं थी, मैं हूँ, मैं रहूंगी।'

इसी प्रकार नारी का एक और रूप 1998 में प्रदर्शित हुई फिल्म 'मेहंदी' में दिखाया गया है। "मेहंदी" फिल्म की नायिका रानी मुखर्जी अपने पिता के खून का बदला, बहन का अपमान, पति और ससुराल वालों के अत्याचार इन सभी का बदला लेने के लिए विद्रोह कर उठती है। मेहंदी फिल्म अन्याय से पीड़ित नारी मन में धैर्य, आत्मविश्वास लिए विदोह से वह किस

प्रकार अंगारे की तरह बनती है इसका चित्रण इसमें किया गया है। इस फिल्म की प्रमुख सारांश को देखे तो स्त्री के हाथों में रची मेंहदी घटनावश किस प्रकार लहू तक की यात्रा करती है। सन् 2000 के बाद बनी फिल्म लज्जा, ब्लैक फ्रायडे, फायर डर्टी पिक्चर आदि फिल्मों ने नारी की कर्तव्य परायणता पतिव्रता और त्याग की मूर्ति आदि रूपों को नये रूपों में प्रस्तुत किया है। जुल्म, अन्याय, अत्याचार जो नारी जीवन की त्रासदी है, समाज को अनपेक्षित, विरोधाभासी मूल्य जब स्त्री के जीवन में आते हैं तो वह चर्चा का विषय बनता है। आस्था (1997), मृत्युदण्ड (1997), चांदनी बार (2001), जुबैदा (2001) आदि फिल्मे औरतो की बानी पार्श्वभूमि को तोड़ती है, साथ ही नारी संस्कार मूल्य उसकी मानसिकता, उसका वास्तविक सामाजिक स्तर, पारंपरिक श्रृंखला को तोड़ती नजर आती है।

सन् 2007 में बनी फिल्म " लागा चुनरी में दाग " की नायिका गणी मुखर्जी जो परिवार को आर्थिक समस्या को बचाने हेतु नौकरी करना चाहती है परंतु वह बन जाती है वैश्या। वैश्या बनकर ही वह पिता को मौत के मुंह से बचाती है, बहन को पढाती है और घर के हालात सुधारती है। 2011 में प्रदर्शित 'बोल' फिल्म की नायिका हुमेमा मलिक अपने पिता के अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाकर उनकी हत्या कर देती है। इस कार्य के लिए उसे फांसी की सजा सुनाई जाती है तो वह अदालत में पितृसत्तात्मक समाज के विरुद्ध एक सवाल उठाती है कि " सिर्फ मारना ही जुल्य क्यों है? हराम के बच्चे पैदा कर उनकी जिंदगिया हराम करना जुल्म क्यों नहीं है? बोल (2011) के निर्देशक राजकुमारी संतोषी ने प्रस्तुत फिल्मों में नारी को सामाजिक हैसियत के तौर पर सामने रखा है, जो समाज नारी मन के न्यूनत्व का दुरुपयोग करता है। इन फिल्मों में नारी की जाग्रती को प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया है

सारांश:-

भारतीय सिनेमा का इतिहास सौ वर्ष पुराना है। भारत में प्रतिवर्ष 1000 से अधिक फिल्मों का निर्माण तथा अरबों रुपयों का कारोबार हो रहा है। ऐसा महत्व प्राप्त करने वाले इस सिनेमा ने नारी का जो चित्रण किया है। जो सिनेमा प्रारंभिक दिनों में पुरुष प्रधान था वह नारी की समस्याएँ नारी का शोषण, नारी का हक एवं अधिकार, नारी का स्तर, नारी का विद्रोह, नारी के विभिन्न रूप लेकर बना फिल्मों की रचना करने लगा। इन फिल्मों से सामाजिक ताने बाने को समझने, कुरीतियों को उजागर करने एवं समाज की सोच में परिवर्तन लाने में सफलता भी प्राप्त हुई है।

REFERENCES

1. डॉ. आर. नागेश : हिन्दी साहित्य और सिनेमा
2. शत्रुधन प्रसाद : साहित्य और सिनेमा
3. संजय सहाय : हिन्दी सिनेमा के सौ साल
4. अवधेश श्रीवास्तव : हिन्दी सिनेमा
5. मृदुला पण्डित : सिनेमा और यथार्थ